उत्तराखंड उच्च न्यायालय, नैनीताल

रिट याचिका सं. 348/2009 (एम/एस)

महिपाल सिंह ... याचिकाकर्ता

बनाम

उत्तराखंड राज्य और अन्य ... प्रतिवादी

श्री अरविंद वशिष्ठ, वकील, याचिकाकर्ता के लिए।

श्री के. पी. उपाध्याय, अतिरिक्त मुख्य स्थायी वकील, उत्तराखंड राज्य /प्रतिवादी नंबर- 1 और 2 के लिए

श्री यू.के. उनियाल, वरिष्ठ अधिवक्ता, सहायता प्राप्त द्वारा श्री डी.एस. पाटनी, अधिवक्ता, प्रतिवादी नं. 3 के लिए

17 दिसंबर, 2009

माननीय सुधांशु धूलिया, न्यायाधीश

याचिकाकर्ता के वकील श्री अरविंद वशिष्ठ, श्री के.पी. उपाध्याय, उत्तराखंड राज्य के लिए विद्वान अतिरिक्त मुख्य स्थायी अधिवक्ता/प्रतिवादी नंबर- 1 और 2 के साथ श्री U.K. उनियाल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री डी. एस. पाटनी, अधिवक्ता, प्रतिवादी नं. 3 के लिए, द्वारा सहायता प्राप्त।

याचिकाकर्ता ने इस अदालत के समक्ष सचिव, पंचायत राज और ग्रामीण इंजीनियरिंग सेवा, उत्तराखंड सरकार द्वारा पारित दिनांक

15.1.2009 के आदेश को चुनौती दी है। [जिसके द्वारा सचिव, पंचायत राज और ग्रामीण अभियांत्रिकी सेवा ने अभिनिर्धारित किया है कि राज्य स्तर पर प्रारंभिक जांच की गई है और यह पाया गया है कि "क्षेत्र पंचायत", भगवानपुर, जिला हरिद्वार के अध्यक्ष के विरुद्ध कोई आरोप साबित नहीं हुए हैं। इसलिए, उक्त "क्षेत्र प्रमुख" के विरुद्ध शिकायत खारिज कर दी जाती है।]

याचिकाकर्ता, जो "क्षेत्र पंचायत" के सदस्य हैं, ने उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायतों और जिला पंचायतों (प्रमुखों, उप-प्रमुखों, अध्यायों और उपाध्यायों को हटाना) के नियम- 3 के तहत शिकायत दर्ज कराई थी।

पूछताछ नियम, 1997 (इसके बाद से "नियम" के रूप में संदर्भित)। नियमों का नियम 3 इस प्रकार हैः-

"3. शिकायतों से संबंधित प्रक्रिया. (1) प्रमुख, उप-प्रमुख, अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के विरुद्ध शिकायत करने वाला कोई भी व्यक्ति अपनी शिकायत पंचायत राज विभाग, विधान भवन, लखनऊ में राज्य सरकार के सचिव को भेज सकता है।

(2) उपनियम (1) में निर्दिष्ट प्रत्येक शिकायत के साथ उसके समर्थन में शिकायतकर्ता का अपना शपथ पत्र और उन सभी व्यक्तियों के शपथ पत्र भी होंगे जिनसे वह दावा करता है कि उसने आरोप से संबंधित तथ्य की जानकारी प्राप्त की है, जो एक नोटरी के

समक्ष सत्यापित हैं, साथ ही आरोप से संबंधित उसके कब्जे या शक्ति में सभी दस्तावेज भी होंगे।

(3) इस नियम के तहत प्रत्येक शिकायत और शपथ पत्र के साथ-साथ किसी भी अनुसूची या संलग्नक को क्रमशः अभिवचन और शपथ पत्र के सत्यापन के लिए सिविल प्रक्रिया संहिता, 1908 में निर्धारित तरीके से सत्यापित किया जाएगा।

(4) शिकायतकर्ता द्वारा शिकायत की कम से कम तीन प्रतियों के साथ-साथ इसके प्रत्येक अनुलग्नक को प्रस्तुत किया जाएगा।

(5) ऐसी शिकायत जो पूर्वगामी प्रावधानों में से किसी का पालन नहीं करती है, उस पर विचार नहीं किया जाएगा।"

उक्त शिकायत के अनुसार, नियमों के नियम 4 से एक जांच का गठन किया गया था। उक्त नियमों का नियम 4 इस प्रकार हैः-

"4. प्रारंभिक जाँचः- (1) राज्य सरकार, नियम 3 में निर्दिष्ट शिकायत की प्राप्ति पर या अन्यथा प्रमुख या उप-प्रमुख के मामले में अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट के पद से कम के अधिकारी को नियुक्त कर सकती है।

और एक अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के मामले में जिला मजिस्ट्रेट यह पता लगाने के लिए प्रारंभिक जांच करे कि क्या मामले में औपचारिक जांच के लिए कोई प्रथमदृष्टया मामला है।

(2) उपनियम (1) के तहत नियुक्त अधिकारी जितनी जल्दी हो सके प्रारंभिक जांच करेगा और अपनी नियुक्ति के एक पखवाड़े के भीतर राज्य सरकार को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करेगा।"

वर्तमान मामले में मुकदमे का एक दौर पहले भी चल चुका है। पूर्ववर्ती रिट याचिका में याचिकाकर्ता का तर्क नहीं है। डब्लू.पी. 1724/२००८ (एम/एस) यह था कि हालांकि प्रतिवादी नं.- 3 के विरुद्ध गठित प्रारंभिक जांच में कुछ वित्तीय और प्रशासनिक अनियमितताएं पाई गई हैं, फिर भी कानून (i.e. उत्तर प्रदेश [क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत] प्रशासन, 1961 के परंतुक के साथ पठित धारा 16) के तहत अनिवार्य प्रावधान के बावजूद, जिसमें कहा गया है कि ऐसी स्थिति में अध्यक्ष की पूरी वित्तीय और प्रशासनिक शक्तियों को समाप्त कर दिया जाना चाहिए और एक "समिति" को दिया जाना चाहिए, जब तक कि अंतिम जांच पूरी नहीं हो जाती और अध्यक्ष को आरोपों से मुक्त नहीं कर दिया जाता। याचिकाकर्ता के अनुसार कानून के इस अनिवार्य प्रावधान का पालन नहीं किया जा रहा था। इस न्यायालय ने अपने अंतरिम आदेश दिनांकित 21.11.2008 के माध्यम से निर्देश दिया कि चूंकि प्रारंभिक जांच में प्रथमदृष्टया निष्कर्ष हैं, इसलिए कानून के अनिवार्य प्रावधान, जैसा कि ऊपर निर्दिष्ट किया गया है, का पालन किया जाना चाहिए या दो सप्ताह के भीतर इस न्यायालय को कारण दिखाया जाना चाहिए। परिणामस्वरूप इस आदेश को इस न्यायालय के एक अन्य विद्वान एकल न्यायाधीश

द्वारा आदेश दिनांक 17.12.2008 के द्वारा संशोधित किया था। हालाँकि, चूंकि सरकार ने अब एक आदेश दिनांकित 15.1.2009 पारित किया है, जिसके तहत उसने यह अभिनिर्धारित किया है कि प्रतिवादी नं.-3 के विरुद्ध कोई भी अपराध साबित नहीं होते हैं, याचिकाकर्ता ने परिणामस्वरूप एक और रिट याचिका दायर करने की स्वतंत्रता के साथ पिछली रिट याचिका को वापस ले लिया था, आदेश 4 दिनांक 16.3.2009 के माध्यम से इस न्यायालय के द्वारा यह याचिका खारिज कर दी गई और याचिकाकर्ता को नई रिट याचिका दायर करने की स्वतंत्रता दी गई। अब यह वर्तमान याचिका में है कि याचिकाकर्ता ने उक्त आदेश दिनांक 15.1.2009 को चुनौती दी है।

वर्तमान मामले के तथ्यों पर लौटने से पहले, कानून के प्रासंगिक प्रावधानों का उल्लेख करना आवश्यक है जिनका वर्तमान रिट याचिका में आत्यन्तिक प्रभाव है। इस न्यायालय के समक्ष जो कुछ भी है वह "पंचायती राज" और स्थानीय स्वशासन की संस्था है। भारत के संविधान के 73वें और 74वें संशोधन द्वारा, इन प्रतिनिधि निकायों को एक संवैधानिक दर्जा दिया गया है और इस तरह की संस्था को चलाने वालों पर एक भारी कर्तव्य जाति है, और वे पूरी पारदर्शिता के साथ लोकतांत्रिक तरीके से ऐसा करेंगे। राज्य में तीन स्तरीय "पंचायत" निकाय है। प्रथम और प्राथमिक स्तर के निकाय को "ग्राम पंचायत" के रूप में जाना जाता है। मध्यस्थ निकाय को "क्षेत्र पंचायत" के रूप में जाना जाता है

और शीर्ष निकाय को "जिला पंचायत" के रूप में जाना जाता है। "क्षेत्र पंचायत" के साथ-साथ "जिला पंचायत" एक अधिनियम द्वारा शासित होते हैं जिसे उत्तर प्रदेश [क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत] अधिनियम, 1961 (इसके बाद से "अधिनियम" के रूप में संदर्भित) के रूप में जाना जाता है। अधिनियम की धारा 16 जो वर्तमान उद्देश्यों के लिए प्रासंगिक है, "क्षेत्र पंचायत" के "प्रमुख" के साथ-साथ "उप-प्रमुख" को हटाने खंड संबंधित एक प्रावधान है। अधिनियम की धारा 16 इस प्रकार हैः-

"16. प्रमुख या उप-प्रमुख को हटाना (1) यदि राज्य सरकार के मत में क्षेत्र पंचायत का प्रमुख या कोई उप-प्रमुख इस अधिनियम के तहत अपने कर्तव्यों और कार्यों को जानबूझकर छोड़ देता है या करने से इनकार करता है, या उसमें निहित शक्तियों का दुरुपयोग करता है या अपने कर्तव्यों के निर्वहन में कदाचार का दोषी पाया जाता है या शारीरिक या मानसिक रूप से दोषी हो जाता है। अपने कर्तव्यों का पालन करने में अक्षम होने पर, राज्य सरकार, यथास्थिति, प्रमुख या ऐसे उप-प्रमुख को स्पष्टीकरण का एक उचित अवसर देने के पश्चात और मामले में संबंधित जिला पंचायत के अध्यक्ष से परामर्श करने के पश्चात और उनकी मत को ध्यान में रखते हुए, यदि इस तरह के परामर्श के लिए पत्र भेजे जाने की तिथि से तीस दिनों के भीतर प्राप्त होता है, तो आदेश द्वारा ऐसे प्रमुख या उप-प्रमुख को पद से हटा सकती है और ऐसा आदेश अंतिम होगा और न्यायालय में पूछताछ के लिए खुला नहीं होगाः

बशर्ते कि, ऐसे व्यक्ति द्वारा और ऐसे तरीके से की गई जांच में, जो निर्धारित किया जा सकता है, किसी प्रमुख या उप-प्रमुख को प्रथमदृष्टया वित्तीय और अन्य अनियमितताएं करते हुए पाया जाता है, वहां ऐसे प्रमुख या उप-प्रमुख, वित्तीय और प्रशासनिक शक्तियों और कार्यों का प्रयोग और उनका प्रदर्शन करना बंद कर देंगे, जिसका प्रयोग, उसके, अंतिम जांच में आरोपों से मुक्त होने तक, राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में नियुक्त क्षेत्र पंचायत के तीन निर्वाचित सदस्यों की एक समिति द्वारा किया जाएगा।

(2) इस धारा के तहत अपने पद से हटाए गए प्रमुख या उप-प्रमुख को हटाने की तिथि से तीन साल की अवधि के लिए प्रमुख या उप-प्रमुख के रूप में फिर से चुनाव के लिए पात्र नहीं होगा।] "

मोटे तौर पर, उपरोक्त प्रावधान यह निर्धारित करता है कि "क्षेत्र पंचायत" के "प्रमुख" या "उप-प्रमुख" को कैसे हटाया जा सकता है। फिर भी, चूंकि ये लंबी प्रक्रिया हैं, इसलिए विधायिका इस खंड को एक परंतुक प्रदान करने के लिए बहुत सतर्क रही है, जिसका इस मामले में महत्वपूर्ण प्रभाव है। परंतुक के अनुसार, यदि प्राधिकृत व्यक्ति द्वारा आयोजित जांच में प्रथमदृष्टया यह पाया गया है कि "प्रमुख" या "उप-प्रमुख" ने, जैसा भी मामला हो, वित्तीय और अन्य अनियमितताएं की हैं, तो ऐसे "प्रमुख" या "उप-प्रमुख" की वित्तीय और प्रशासनिक शक्तियां समाप्त हो जाएंगी और अंतिम जांच में आरोपों से बरी होने के पश्चात उसे वापस कर दिया

जाएगा। इस बीच, इन वित्तीय और प्रशासनिक शक्तियों का प्रयोग और निष्पादन राज्य सरकार द्वारा इस संबंध में नियुक्त एक ही "क्षेत्र पंचायत" के तीन निर्वाचित सदस्यों की एक समिति द्वारा किया जाना है। इस परंतुक का "क्षेत्र पंचायत" के उचित प्रशासन पर बहुत प्रभाव पड़ता है क्योंकि किसी आकस्मिक स्थिति में यह लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित "प्रमुख" (या "उप-प्रमुख", जैसा भी मामला हो) से प्रशासनिक और वित्तीय शक्तियों को छीन लेता है, लेकिन फिर ये शक्तियां किसी नौकरशाह या सरकारी अधिकारी को नहीं बल्कि उसी "क्षेत्र पंचायत" के सदस्यों को दी जाती हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो यहां किसी भी लोकतांत्रिक मानदंड का उल्लंघन नहीं हुआ है। इस परंतुक को, जिसका हम वर्तमान में संबंध रखते हैं, उत्तर प्रदेश क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत (प्रमुखों, उप-प्रमुखों, अध्यायों और उपाध्यायों को हटाना) पूछताछ नियम, 1997 के रूप में माने जाने वाले नियमों के साथ पढ़ा जाना चाहिए। उक्त नियमों के नियम 3 और 4 का उल्लेख पहले ही ऊपर किया जा चुका है। नियम 5 जो कि महत्वपूर्ण है वह इस प्रकार हैः-

"5. पूछताछ अधिकारी.- जहां राज्य सरकार की मत है, नियम 4 के उप-नियम (2) में निर्दिष्ट रिपोर्ट के आधार पर, कि धारा 16 के तहत किसी प्रमुख या उप-प्रमुख के विरुद्ध या धारा 29 के तहत किसी अध्यक्ष या उपाध्यक्ष के विरुद्ध जांच की जानी चाहिए, वह एक आदेश द्वारा जांच करने के लिए एक अधिकारी नियुक्त करेगी, जो धारा 16 के तहत जांच

के मामले में जिला मजिस्ट्रेट के रैंक से नीचे नहीं होगा और धारा २९ के तहत जांच के मामले में आयुक्त के रैंक से नीचे नहीं होगा।"

वर्तमान मामले के व्यापक तथ्य यह हैं कि "क्षेत्र पंचायत" के एक सदस्य ने "क्षेत्र पंचायत" के अध्यक्ष के विरुद्ध शिकायत दर्ज की जो वर्तमान प्रतिवादी नं. 3 है और परिणामस्वरूप राज्य सरकार ने ऐसी शिकायत प्राप्त करने के पश्चात यह देखने के लिए प्रारंभिक जांच शुरू की कि क्या शिकायत में कोई सार है या यह पूरी तरह से तुच्छ है। राज्य सरकार एक जांच अधिकारी की नियुक्ति करती है जो नियम 4 के तहत अतिरिक्त जिला मजिस्ट्रेट या इस पद से ऊपर का अधिकारी होता है। प्रतिवादी नं.- 3 के विरुद्ध सात आरोप हैं। जाँच अधिकारी ने अपनी प्रारंभिक जाँच में पाया की आरोप संख्या 5 और 6 प्रथमदृष्टया सही पाए गए हैं और उनकी रिपोर्ट में ऐसा कहा गया है। प्रतिवादी सं,- 3 के विरुद्ध आरोप संख्या- 5 यह था कि उसने एक परियोजना के निर्माण में अनियमितताएं की थीं और प्रारंभिक जांच में यह पाया गया कि 6 से 7 श्रमिक हैं जो 16.7.2006 से 31.7.2006 के बीच कुछ निश्चित तिथियों पर "पंचायत" की परियोजना पर काम कर रहे थे और उन्हीं तिथियों पर उन्हें इस "पंचायत" की एक अन्य परियोजना पर भी काम करते हुए दिखाया गया था। इसलिए, स्पष्ट रूप से एक वित्तीय अनियमितता थी क्योंकि दो व्यक्तियों के समूह को दी जाने वाली मजदूरी वास्तव में मात्र एक को दी गई है। आरोप संख्या- 6 में भी यही था कि कुछ व्यक्ति जो किसी

परियोजना के लिए नियोजित थे, वे इस तरह से नियुक्त होने के योग्य नहीं थे।

चाहे जो भी हो, जांच अधिकारी एक जांच रिपोर्ट प्रस्तुत करता है जिसमें प्रथमदृष्टया प्रतिवादी नं. 3 इन आरोपों के दोषी हैं। याचिकाकर्ता का तर्क था कि एक बार जब वह प्रारंभिक जांच में स्पष्ट रूप से सामने आ जाता है कि पदधारी के विरुद्ध वित्तीय और अन्य अनियमितताएं हैं, तो धारा 16 का प्रावधान तुरंत लागू हो जाता है और सरकार के पास ऐसे अध्यक्ष को अपनी वित्तीय और प्रशासनिक शक्तियों से तब तक वंचित करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था जब तक कि वह अंतिम जांच में आरोपों से बरी नहीं हो जाते। यही कारण है कि याचिकाकर्ता ने पहले की रिट याचिका दायर की थी, जिसका एक संदर्भ पहले ही ऊपर दिया जा चुका है और उसका परिणाम भी।

फिर भी, याचिकाकर्ता का अब यह तर्क है कि अधिनियम की धारा 16 के प्रावधान के अनिवार्य प्रावधान पर कार्रवाई करने के बजाय, राज्य सरकार ने विवादित आदेश के माध्यम से यह माना है कि प्रतिवादी नं. 3 के खिलाफ कोई आरोप साबित नहीं हुआ है और इसलिए, उसके विरुद्ध सभी कार्यवाही रद्द कर दी गई है। याचिकाकर्ता का कहना है कि यह स्पष्ट रूप से अवैध है। सबसे पहले, चूंकि प्रारंभिक जांच में यह आवश्यक नहीं है कि आरोप लगाए जाएं। ऊपर निर्दिष्ट नियमों से प्रारंभिक जांच की एकमात्र आवश्यकता यह कि प्रथमदृष्टया जांच

अधिकारी को संतुष्ट होना चाहिए कि आरोप लगाए गए हैं। याचिकाकर्ता का एक और तर्क यह है कि चूंकि प्रारंभिक जांच की रिपोर्ट जो इस न्यायालय के समक्ष है, उसमे स्पष्ट रूप से कहा गया है की प्रतिवादी संख्या-३ के खिलाफ कुछ आरोप प्रथमदृष्टया सही साबित हुए हैं जो वित्तीय और प्रशासनिक अनियमितताओं के अंतर्गत आता है, सरकार के पास प्रतिवादी सं.- 3 की वित्तीय और प्रशासनिक शक्ति को समाप्त करने के अलावा कोई विकल्प नहीं था और एक समिति को वही शक्तियाँ दें, जैसा कि अधिनियम की धारा 16 के परंतुक में परिकल्पित हैं।

तर्क के दौरान, यह भी पता चला है कि जब प्रारंभिक जांच रिपोर्ट सचिव, पंचायत राज के प्रथमदृष्टया प्रस्तुत की गई थी, तो सचिव, पंचायत राज ने अपने पत्र दिनांकित 4.11.2008 के माध्यम से जांच अधिकारी से स्पष्टीकरण मांगा था क्योंकि सरकार इस बारे में स्पष्ट नहीं थी कि क्या प्रतिवादी नं.- 3 के विरुद्ध लगाए गए आरोप प्रथम दृष्टया सही हैं या नहीं। इस जांच अधिकारी ने उक्त पत्र के उत्तर में अपने पत्र दिनांकित १२-१२-२००८ द्वारा स्पष्ट किया कि प्रथम दृष्टया प्रतिवादी संख्या-३ के विरुद्ध आरोप संख्या ५ और ६ बनते हैं। एक बार जब जांच अधिकारी ने स्पष्ट रूप से कहा कि अध्यक्ष के विरुद्ध आरोप बनता है और यहाँ तक की सरकार द्वारा मांगे गए स्पष्टीकरण पर भी अपनी स्थिति दोहराई है, तो सरकार के पास

प्रतिवादी संख्या- 3 से वित्तीय और प्रशासनिक शक्तियों को वापस लेने के अलावा कोई विकल्प नहीं था।

दूसरी ओर, उत्तरदाता नं. 3 के लिए वरिष्ठ अधिवक्ता श्री यू.के. उनियाल का यह तर्क है कि सबसे पहले प्रतिवादी नं.-३ के विरुद्ध आरोप प्रथमदृष्टया साबित नहीं होते हैं। इसके अलावा, वर्तमान मामले में अधिनियम की धारा 16 भी लागू नहीं होती है और चूंकि धारा 16 लागू नहीं हुई है, इसलिए धारा 16 के प्रावधान के लागू होने का कोई प्रश्न ही नहीं है, क्योंकि सरकार ने विवादित आदेश दिनांकित 15.1.2009 के माध्यम से प्रतिवादी संख्या-३ के विरुद्ध कार्यवाही को छोड़ने का फैसला पहले ही कर लिया है। विद्वान अधिवक्ता का तर्क नियमों के नियम 4 और 5 की उनकी व्याख्या पर आधारित है। श्री U.K. उनियाल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता प्रतिवादी नं. 3 के लिए का तर्क है कि नियमों के नियम 3 के तहत शिकायत प्राप्त करने पर राज्य सरकार प्रारंभिक जांच शुरू कर सकती है या नहीं भी कर सकती है। हालाँकि, चूंकि वर्तमान मामले में उसने ऐसा करने के बारे में सोचा था और एक जांच रिपोर्ट आ गई है, इसलिए इस रिपोर्ट का वास्तविक अर्थ यह नहीं होगा कि अधिनियम की धारा 16 लागू हो गई है, बल्कि इसका पहले सरकार द्वारा नियमों के नियम 5 से परीक्षण किया जाना है, जो पहले ही ऊपर निर्दिष्ट किया जा चुका है। उत्तरदाता नं.- 3 के लिए वरिष्ठ अधिवक्ता का तर्क है कि यदि राज्य सरकार का मत है कि प्रतिवादी नं.- 3 के विरुद्ध कार्यवाही करने का

कोई आधार नहीं है। जैसा कि वर्तमान मामले में है, तो कार्यवाही को छोड़ना राज्य सरकार की शक्तियों के भीतर है। श्री U.K. उनियाल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार, सरकार ने नियम 5 और 10 के तहत अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए आरोपों को हटा दिया है। इसलिए, अधिनियम की धारा 16 कभी लागू नहीं हुई है। धारा 16 का प्रावधान तभी लागू होगा जब सरकार धारा 16 i.e के तहत प्रत्यर्थी सं.-३ को हटाने के लिए अंतिम जांच के साथ आगे बढ़ने का सचेत निर्णय ले और यदि उस जांच में प्रतिवादी संख्या-३ के विरुद्ध प्रथमदृष्टया निष्कर्ष मिलता है तभी उसे उसकी वित्तीय और प्रशासनिक शक्तियों से वंचित किया जाएगा।

श्री U.K. उनियाल, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता प्रतिवादी नं.-3 के लिए, का ये तर्क आत्यन्तिक रूप से गलत धारणा है। नियम 4 और 5 कुछ भी नहीं हैं, बल्कि अधिनियम की धारा 16 के तहत दी गई मूल कानून की एक प्रक्रिया हैं। धारा 16 के परंतुक में किसी भी प्रकार के संदेह के लिए कोई गुंजाइश नहीं है कि यदि प्रारंभिक जांच में वित्तीय या अन्य अनियमितताओं का पता चलता है, तो राज्य सरकार "प्रमुख" की प्रशासनिक और वित्तीय शक्तियों को छीन लेगी और इसे एक समिति को तब तक देगी जब तक कि वह अंतिम जांच में आरोपों से बरी नहीं हो जाता। इसके अलावा, इस मामले का एक और पहलू है। प्रारंभिक जाँच में जाँच अधिकारी ने यह भी सुझाव दिया है कि वर्तमान मामले में अंतिम

जाँच की जानी चाहिए। इसलिए, अधिनियम की धारा 16 के आलोक में नियमों के नियम 4 और नियम 5 को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि सरकार के पास इन परिस्थितियों में प्रतिवादी संख्या -३ के विरुद्ध अधिनियम की धारा 16 के तहत अंतिम जांच के साथ आगे बढ़ने के अलावा कोई विकल्प नहीं था और उत्तरदाता सं.- 3 प्रत्यर्थी सं.- 3 के आरोपों से दोषमुक्त है तथा उसकी वित्तीय और प्रशासनिक शक्तियों को समाप्त किया जाना चाहिए और एक समिति को दिए जाने योग्य हैं। विशेष अपील नंबर- ६०/ २००८ **रामेशो देवी बनाम राव अली बहादुर और अन्य** के मामले में इस अदालत की खंडपीठ का यह विचार रहा है जहां उत्तर प्रदेश [क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत] धारा- 29, अधिनियम- 1961 के एक पैरा-सामग्री के प्रावधान पर विचार किया जा रहा है जो "जिला पंचायत" के एक "अध्यक्ष" से संबंधित है, न्यायालय ने इस प्रकार से कहा हैः-

"4. '1961 अधिनियम' की धारा 29 की उप-धारा (1) के प्रावधान में स्पष्ट रूप से कहा गया है कि जहां एक जांच में एक अध्यक्ष या उपाध्यक्ष को प्रथमदृष्टया वित्तीय और अन्य अनियमितताओं को अंजाम देते हुए पाया जाता है, वह वित्तीय और प्रशासनिक शक्तियों और कार्यों आदि का प्रयोग और प्रदर्शन करना बंद कर देगा। परंतुक का एक सादा अध्ययन प्रथमदृष्टया हमें यह सुझाव देता है कि यदि वास्तव में एक जांच में यह पाया जाता है कि अध्यक्ष या उपाध्यक्ष ने कोई वित्तीय और अन्य

अनियमितताएं की हैं, तो उसे उसकी प्रशासनिक शक्तियों और कार्यों से वंचित होने की कानून की अनिवार्य आवश्यकता है। परंतुक में प्रयुक्त शब्द "होगा" इस तरह के विधायी इरादे को व्यक्त करता है।"

इस प्रकार, इस न्यायालय का यह मत है कि आदेश दिनांकित 15.1.2009 (रिट याचिका का अनुलग्नक सं.- 7) बिल्कुल अवैध है और अधिनियम के साथ-साथ नियमों का आत्यन्तिक रूप से उल्लंघन है। रिट याचिका अनुमति दिए जाने योग्य है तथा राज्य सरकार को इस निर्देश के साथ अनुमति दी जा रही है कि प्रतिवादी नं.- 3 के विरुद्ध अंतिम जांच अधिनियम की धारा 16 के तहत बिना किसी अग्रेतर विलम्ब के जितनी जल्दी हो सके, कर दी जाए। आगे यह निर्देशित किया जाता है कि प्रतिवादी संख्या १ और २ उत्तर प्रदेश [क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत] अधिनियम, 1961 की धारा 16 की तुरंत कार्यवाही करें और उपरोक्त अधिनियम से परिकल्पित एक जांच का गठन करेंगे और जब तक कि ऐसी जांच पूरी नहीं हो जाती और जब तक कि प्रतिवादी सं.- 3 को उनके विरुद्ध लगे आरोपों से बरी नहीं कर दिया जाता है, तो "क्षेत्र पंचायत" की वित्तीय और प्रशासनिक शक्तियां सरकार द्वारा "क्षेत्र पंचायत" के तीन सदस्यों की एक समिति को दी जाएंगी, जैसा कि उत्तर प्रदेश [क्षेत्र पंचायत और जिला पंचायत] अधिनियम, 1961 की धारा १६ के उपरोक्त परंतुक में दिया गया है।

इन टिप्पणियों के साथ रिट याचिका का निपटारा किया जाता है। आदेश का कोई वाद व्यय नहीं है।

(सुधांशु धूलिया, जे.)

17.12.2009

अवनीत